मन यदि आसक्त हो सकता है तो विरक्त भी

प्रभात रश्मिः

27 मई 2011

स्वामी भूमानन्द तीर्थ

हरिः ओम् तत् सत् जय गुरु,

मैं भागवतम् का एकादश स्कंध पढ़ रहा हूं। यह उद्धव को दिया गया कृष्ण का अंतिम उपदेश है। इसमें कुल 24 अध्याय हैं। इसे भागवतम् का सार कहा जाता है।

मैं विशेषकर पढ़ रहा था - हमारे देश का वर्णाश्रम धर्म क्या है। वर्ण का अर्थ है लम्ब रूप से वर्गीकरण। आश्रम का अर्थ है क्षैतिज वर्गीकरण। आरंभ में हम ब्रह्मचारी होते हैं, फिर शादी होती है। जीवन यहीं नहीं रूक जाता है, आपको घर-द्वार भी छोड़ना पड़ता है, वन में जाकर रहना होता है। यदि आप इसमे सफल होते हैं तो फिर सन्न्यास ले लीजिये - सन्न्यास जीवन का अंतिम पड़ाव है। सन्न्यास कैसे लिया जाता है? कौन कौन से अभ्यास और अनुशासन हैं जिनका पालन किया जाता है, विभिन्न स्थितियों में? इत्यादि।

वस्तुतः जब मैंने इसे पढ़ा तो पाया कि यह तो हमारे समाज का इतिहास है। जैसे एक इतिहासज्ञ लिखते हैं और इतिहास के विद्यार्थी पढ़ते हैं, मैं भी पढ़ रहा हूं। मुझे पता चलता है किस तरह हमारे लोग रहते थे और कैसे रहना चाहिए। आपलोग समझते हैं कि विवाहित जीवन ही पूर्ण है। फिर आपके पौत्र परपौत्र होते हैं। उनकी शादी होती है, आप बहुत ख़ुश होते हैं। लेकिन नहीं! यह तो आपका आधा जीवन ही है! यहां तक तो आपका जीवन एक तरह से परिवार और

© नारायणाश्रम तपोवनम, 2013

इसके सदस्यों से जुड़ा हुआ है। आप अपने आंतरिक व्यक्तित्व को कभी भी विकसित नहीं कर पाए; जिसके द्वारा आप अपने को संपन्न महसूस कर सकें और कुछ भी नहीं चाहते हुए, कोई अपेक्षा नहीं करते हुए पूर्णता की अवस्था में अन्ततः इस दुनिया से जाएं।

जीवन के दो महत्वपूर्ण भागों की हम उपेक्षा करते हैं। इसलिए मैं अपने मंच से खुले शब्दों में कहता हूं, "आप सभी अर्ध-मानव हैं, आप पूर्ण मानव नहीं होंगे जब तक आप सिर्फ़ एक विवाहित व्यक्ति की तरह पुत्र और पौत्रों के साथ रहते हैं। आप अपने मन को विकसित करने के लिए, मन को शुद्ध करने के लिए, बुद्धि को प्रबुद्ध करने के लिए कभी समय नहीं निकाल पाए और अपने जीवन, दुनिया, भगवान, इत्यादि के सत्य को समझ नहीं पाए"।

अतः यही क्रम है - ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्न्यास। और उन्हें किसका ध्यान रखना है। आप जानते हैं एक गृहस्थ अपने आप में सुरक्षित घर में रह रहा था। वह पैसे कमा रहा था, उसके पास धन था, आदि, आदि। ऐसा गृहस्थ अचानक ही घर-गृहस्थी को छोड़ने का निर्णय ले लेता है। और वही व्यक्ति जो अच्छी तरह सुरक्षित था, इत्यादि - इसी को आपको समझना है प्रिय 'उ'। आप कुछ भी छोड़ने को तैयार नहीं हैं। फिर मन का क्या विकास हुआ? हम इतने ज़्यादा चिपकने वाले क्यों हैं? जाने दें! जाने दें! वह कहता है मैं सिर्फ़ वहीं खाऊंगा जो सूर्य के ताप से पका होगा। क्या? जो सूर्य के द्वारा पका होगा! और मैं कल के लिए कुछ भी नहीं रखूंगा। वही गृहस्थ जो भविष्य के लिए वस्तुओं को अधिक से अधिक जमा करता था, वह निर्णय लेता है छोड़ने का और बिलकुल अलग जीवन बिताने का। जरा देखिए, मन की संभावना को! हो सकता है आप इसे न कर पाएं लेकिन कम से कम इसे सोचिए तो कि यह संभव है। जो मन सब से चिपक जाता है, वह निर्णय लेता है छोड़ने का और आप 'एम' धूम्रपान छोड़ने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

देखिये, जो मन वस्तुओं से चिपक रहा था वह छोड़ने का फ़ैसला करता है। जब आप गृहस्थ होते हैं और ग़रीबी आती है तो यह एक दुःख है। जब आप ग़रीबी को एक तपस् के तौर पर गले लगा लेते हैं और घर से दूर चले जाते हैं तो यह भूख भी एक बड़ा सम्मान हो जाता है, यह एक संपन्नता हो जाता है; यह प्रतिदिन की आपकी भूखों मरने की स्थिति एक शिर्ष अलंकार हो जाता है। इसे आप कोसेंगे नहीं! देखिये, यह गंभीर स्थिति आई है जब आपने इसे चाहा है, जब आपने इसे

चुना है। नहीं तो, "मैं दुःखी हो रहा हूं, मैं कुछ भी नहीं हूं!" जब आप घुमक्कड़ हो जाते है और भूखों रहने की स्थिति आती है - प्रतिदिन, प्रति मिनट भूख एक आशिर्वाद हो जाता। इस अंतर को देखें।

इसीलिए मैं कहता हूं *मनः कृतं कृतं कार्यं न तु देहकृतं कृतं।* जो भी मन के द्वारा किया जाता है केवल वही किया हुआ है न कि जो शरीर के द्वारा किया जाता है।

श्रीमद् भागवत ऋषभ चक्रवर्ती का दृष्टांत देता है। वह एक महान व्यक्ति थे। उन्होंने अपने बच्चों को बुलाकर धर्म पर एक सुन्दर उपदेश दिया और इसके बाद कहा, "मैं एक अवधूत बनने जा रहा हूं" और महल से निकल पड़े। महल से बाहर निकल गए! सिर्फ़ इतना ही नहीं! वह बाहर निकल गये लेकिन वह कोई साधारण भिक्षुक नहीं थे। वह अवधूत बन गये। अवधूत का अर्थ है किसी चीज़ की अपेक्षा नहीं - वे अपने शरीर को भी साफ नहीं रखते हैं। भागवत कहता है कि वह इतने तापसी और सन्न्यासी थे कि उनका मल भी मीलों दूर से सुगंध फैलाती थी। अंत में वह कूर्ग पर्वत पर आए और अपने मुंह में पत्थर डाल लिया। आप कभी भयभीत होंगे, कभी घबरा भी जाएंगे। वह एक राक्षस की तरह हो गए और अपने शरीर को नष्ट करना चाहा। उसी समय एक जंगली आग फैल गई और वह उसमे जल गए। देखिये कि एक आदमी आध्यात्मिक अवधूतपन को इतनी दूर तक ले जा सकता है। क्या आप चक्रवर्ती की कल्पना कर सकते है जो महल में राजगद्दी पर थे और उपदेश देने के बाद वह सरलता से अवधूत हो गए थे? इसे सुनिए, इसे सुनिए! हो सकता है, आप इसे न कर पाएं लेकिन कम से कम इसका आदर तो करें। मन की यही शक्ति है। जब मन बदल जाता है तो सब कुछ अलग हो जाता है।

मैं वर्णाश्रम धर्म पढ़ रहा था। दो स्थानों पर इसका भेद खुलता है। एक के बारे में मैंने पहले ही लिखा है, वह है - नारद से युधिष्ठिर का सातवें स्कंध में । मैं नहीं लिखना चाहता था लेकिन मां ने लिखने को कहा - क्योंकि एक ही विषय की कृष्ण और नारद के द्वारा भी विवेचना की गई है। इसलिए इसमें अन्तर है। मैं इस अन्तर के बारे में बताने की कोशिश करूंगा। मैं आपको यह बताना चाहता था कि मैं इसे पढ़ रहा हूं। हो सकता है आपको कभी इसे सुनने का मौका मिले। ऐसा नहीं कि आप इसे पसंद करेंगे या आप इसे समझेंगे लेकिन इसे सुनें! मैं एक बहुत ही रचनात्मक व्यक्ति हूं। मैं उत्सुक हूं कि

कैसे इस एकादश स्कंध को लोकप्रिय बना दूं। इसलिए मैं सोच रहा हूं, मैं एक बड़ा आयोजन करना चाहता हूं, एक बहुत ही विशाल पैमाने पर कार्यक्रम। वह कार्यक्रम क्या है? मेरे मन में कुछ विचार आ रहा है। देखें मैं इसे कर पाता हूं या नहीं। एक बहुत ही विशाल आयोजन! कम से कम दस हज़ार लोग भाग लें, मेरी यह भवना है। ऐसा स्थान कहां है जहां दस हज़ार लोग जमा हो सकें? यह आसान नहीं है!

इसलिए मैं आपलोगों से पूछना चाहता था। मैं यहां आकर पढ़ता हूं ताकि आप इसे सुनें। क्या आप इसे पसंद करते हैं जब मैं इसे पढ़ता हूं? हह! ये लोग पसंद कर रहे हैं! आपकी क्या राय है, 'आर' 'एम' 'एस'! हमारे 'ए' आज नहीं आये हैं। अतः मैं यहां आया था सिर्फ़ पढ़ने के लिए, मैं स्वयं इसे पढ़ना चाहता था। मैं जो आनंद पा रहा हूं आपको इसे समझना चाहिए। वाह! यदि मैं खाना चाहता हूं तो इसका मुख्य कारण है कि यदि मैं खाऊंगा तभी मेरे शरीर का पोषण होगा और पोषित शरीर ही इस योग्य होगा कि..... आप जानते हैं मुझे भूख लगी है, मैं भूखा हूं - मैं आगे पढ़ नहीं पा रहा हूं। तो आप समझते हैं कि भोजन की आवश्यकता है। भोजन की जरूरत है, शरीर को बनाए रखने के लिए। और शरीर को बनाए रखा जाता है तकि प्राण बना रहे। जब प्राण होगा तभी आप बोल सकेंगे, देख सकेंगे, सुन सकेंगे, चल सकेंगे। शरीर के पोषण का उद्देश्य है इसे बनाए रखना। यदि मुझे पढ़ना भी है तो मेरे पास शक्ति और ऊर्जा होनी चाहिए। आज आधा घंटे पहले मैंने इसे पढ़ना शुरु किया। मैं यहां भी आया। आप पसंद करें या नहीं मैं बताना चाहता था। तो मैं इसे यहां पढ़ना जारी रखूंगा। यह इतना आनंददायक है! इतना आनंददायक!

ज्ञानं विशुद्धं विपुलं यथैतद्वैराग्यविज्ञानयुतं पुराणम्।

आख्याहि विश्वेश्वर विश्वमूर्ते त्वद्भक्तियोगं च महद्विमृग्यम्॥

तापत्रयेणाभिहतस्य घोरे सन्तप्यमानस्य भवाध्वनीश।

पश्यामि नान्यच्छरणं तवाङ्घ्रि द्वन्द्वातपत्रादमृताभिवर्षात्॥

दष्टं जनं सम्पतितं बिलेऽस्मिन्कालाहिना क्षुद्रसुखोरुतर्षम्।

समुद्धरैनं कृपयापवर्ग्यैर्वचोभिरासिञ्च महानुभाव॥

(श्रीमद्भागवतम् 11.19.8 – 11.19.10)

उद्धव कहते हैं, "अपने शब्दों से मुझे भिगोंये और शीतल करें"। "मेरे ऊपर अपने शब्दों की बौछार करें", वह कहते हैं। ये सभी पूर्वी उद्गार के आदर्श-रूप हैं। क्या आपके पास इनके लिए कोई प्रशंसा के शब्द हैं? इसके लिए कोई अंग्रेजी संप्रेषण नहीं है।

समुद्धरैनं कृपयापवर्ग्यैर्वचोभिरासिञ्च महानुभाव।

उद्धव कृष्ण को 'महानुभाव' कह कर संबोधित करते हैं। साधारणतः यह शब्द बड़े लोगों के लिए प्रयोग किया जाता है और शिष्य या भक्त इसका प्रयोग करते हैं। तो वह कृष्ण को भगवान कह कर नहीं पुकारते। इस विशेष समय पर वह कहते हैं - "ओ महति अनुभव के धनी मानव",

समुद्धरैनं - मुझे उठाएं, उद्धार करें,

कृपया - कृपापूर्वक,

अपवर्ग्यैः वचोभिः - शब्द, शब्द, जो बौछार कर रहे हैं, बौछार कर रहे हैं - उदारतापूर्वक अमृत का,

आसिञ्च - मुझे भिगोएं,

(पूज्य स्वामीजी श्लोक का पाठ एक बार फिर करते हैं)

ज्ञानं विशुद्धं विपुलं यथैतद्वैराग्यविज्ञानयुतं पुराणम्।

आख्याहि विश्वेश्वर विश्वमूर्ते त्वद्भक्तियोगं च महद्विमृग्यम्॥

तापत्रयेणाभिहतस्य घोरे सन्तप्यमानस्य भवाध्वनीश।

पश्यामि नान्यच्छरणं तवाङ्घ्रिं द्वन्द्वातपत्रादमृताभिवर्षात्॥

दष्टं जनं सम्पतितं बिलेऽस्मिन्कालाहिना क्षुद्रसुखोरुतर्षम्।

समुद्धरैनं कृपयापवर्ग्यैर्वचोभिरासिञ्च महानुभाव॥

हरिः ओम् तत्सत् , जय गुरु!

* * *

Narayanashrama Tapovanam
Venginissery, P.O. Ammadam, Trichur, Kerala – 680563, India
Email: ashram1@gmail.com; Website: http://www.swamibhoomanandatirtha.org